"ओ३म्"

आर्य समाज के १०० वर्ष

१८७५ से १९७५ तक आर्य समाज ने राष्ट्र, समाज और संसार को क्या दिया?

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली-५

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी पर विशेष
जन-ज्ञान प्रकाशन का १२८वां पुष्प

प्रकाशक :
जन-ज्ञान-प्रकाशन
१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

लेखक
भारतेन्द्रनाथ

प्रथम संस्करण : मई १९७४
द्वितीय संस्करण : जौलाई १९७४
तृतीय संस्करण : सितम्बर १९७४
चतुर्थ संस्कर : जनवरी १९७५

[...य : २० पैसे]

आर्यसमाज को श्रद्धा सुमन

...ज १९वीं शती का महान्तम धार्मिक आन्दोलन है।

—ब्लन्ट, १९११ की जनगणना की रिपोर्ट

...ान हिन्दू विचारधारा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और मनो-

—सर हैनरी काटन, न्यू इण्डिया पुस्तक में

...ओं के सामने सुनिश्चित सिद्धान्त प्रस्तुत करता ...र आर्य परम्पराएं हैं। आर्यसमाज सामाजिक ... योजनाएं प्रस्तुत करता है जिनके बिना

—सर हर्बर्ट रिस्ले

...पूर्ण सहानुभूति है। —मैक्समूलर

...न्वयात्मकता की दृष्टि से आर्य- ...।

— सुभाषचन्द्र बोस

... के लिए कार्य कर रहा ... महत्त्व की है जिसे

...रामानन्द चटर्जी

...आश्चर्यजनक

... सरकार

...नराय

...ी

१०...

किय...

११—आर्यसम...

निराशा थी, अंधेरा था, राम और कृष्ण के अनुयायी ऋषि मुनियों के वंशधर हताश थे। १८५७ के प्रलयकारी ब्रिटिश दमन चक्र के पश्चात् चारों ओर उदासी छायी थी। भारत की गौरव गरिमा और लालिमा अस्तप्राय थी।

देश में स्वार्थ का बोलबाला था। धर्म के नाम पर पाखण्ड, ज्ञान के नाम पर अज्ञान और सत्य के नाम पर असत्य चहुँ ओर छाया था। ऐसे काल में गुजरात प्रांत के टंकारा ग्राम में श्री किशन जी तिवारी के यहां १२ फरवरी सन् [illegible] ई० को बालक मूलशंकर ने जन्म लिया।

बालक मूलशंकर के मन में सज्ञान होते ही प्रभु से मिलने की भावना जागी। ईश्वर और सत्य ज्ञान की खोज में मूलशंकर संन्यासी स्वामी दयानन्द बना। मथुरा में गुरु विरजानन्द के चरणों में रहकर स्वामी दयानन्द ने सच्चा ज्ञान पाया। ज्ञान पाकर स्वामी दयानन्द ने हिमालय पर जाकर योग साधना कर प्रभु को जाना, सत्य को समझा और संकल्प लिया भारत की पवित्र भूमि से अज्ञान-अन्धकार हटाने का।

ज्ञान का प्रसारक संन्यासी दयानन्द भारत के कोने - कोने में सत्य ज्योति फैलाता हुआ, घूमता रहा। [illegible] ज्ञान, तप, त्याग और अगाध पांडित्य से स्वामी दयानन्द ने भारत के गत गौरव को पुनः प्रतिष्ठित किया। जन-मानस को नयी शक्ति, प्रेरणा, और दिशा देकर स्वामी जी ने भारत के कण-कण में स्फूर्ति का संचार किया।

पाखण्डों को खण्ड-खण्ड कर, [illegible] र प्रबल प्रहार कर स्वामी दयानन्द ने राम, कृ[illegible] न परम्परा के अजस्र प्रवाह को पुनः प्रवाहित कि[illegible] न की ज्योति-मय पताका फहराने के लिए चैत्र [illegible] को बम्बई में "आर्यसमाज" संगठन को स्थापि[illegible]

१८७५ से १९७५ तक के १०० वर्षों में स्वामी दयानन्द द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने क्या किया, इसकी संक्षिप्त झाँकी अगले पृष्ठों में प्रस्तुत है।

संक्षेप में इतना ही कथन पर्याप्त है कि अगर स्वामी दयानन्द न होते और उन्होंने आर्यसमाज के रूप में अपना उत्तराधिकारी कार्यक्षेत्र में अवतरित न किया होता तो—

न होता स्वराज-सूर्योदय, न ज्ञान का प्रकाश होता।
न वेद-शास्त्र, न राम, कृष्ण, सत्य का विकास होता।
होता हिन्द, किन्तु अवैदिक मतवादियों से पूर्ण—
मेरे देश का गौरव न गूंजता भू मण्डल में
चारों ओर केवल हीन भावना का राज्य होता।

२. ईश्वर दर्शन : मार्ग प्रदर्शन

मानव मात्र के प्रति आर्यसमाज की सबसे बड़ी देन है—प्रभु के सच्चे स्वरूप का मार्ग दर्शन। आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द के मन में बाल्यकाल में जिस जिज्ञासा ने जन्म लेकर उन्हें मूलशंकर से ऋषि दयानन्द बनाया था, वह प्रभु को जानने और उस से मिलने की भावना ही थी।

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक का सबसे बड़ा उपकार मानव जाति पर यही है कि उन्होंने परमात्मा का सच्चा स्वरूप और उससे मिलने का मार्ग सभी के समक्ष प्रस्तुत किया।

परमात्मा के सच्चे स्वरूप को भूलने के कारण ही धरती पर अज्ञान फैला हुआ था। किसी का ईश्वर चौथे आसमान पर, किसी का सातवें आसमान पर और किसी का कहीं और किसी का कहीं रहता था।

आर्यसमाज ने ही संसार को बताया कि—

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

परमात्मा की इस अभूतपूर्व वैज्ञानिक, तर्क युक्तिसंगत व्याख्या के साथ ही **आर्यसमाज ने कहा कि**—ईश्वर सर्वव्यापक है वह अणु-अणु में विद्यमान है। उसे खोजने जाने की कहीं आवश्यकता नहीं, बस तुम अपने को जान लो, मन मन्दिर में तुम्हारा प्रभु तुम्हें मिल जायेगा।

आर्यसमाज का प्रचार था कि—

संसार में रहते हुए, गृहस्थ जीवन को धर्मपूर्वक निभाते हुए भी प्रत्येक व्यक्ति प्रतिपल—प्रतिक्षण परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है। आर्यसमाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द ने बताया कि—**जब जीवात्मा शुद्ध हो के परमात्मा का विचार करने में तत्पर रहता है उस को उसी समय दोनों प्रत्यक्ष होते हैं।**

प्रभु से मिलने का कितना सीधा मार्ग बताया आर्यसमाज ने।

१. जीवात्मा शुद्ध है, अर्थात् राग, द्वेष, क्रोध, ईर्ष्या आदि अधर्म से मुक्त है।
२. पवित्र होकर जीवात्मा प्रभु का चिन्तन करे, और अपने मन को आत्म-दर्शन की स्थिति में लाए।
३. तब उसे अपना भी प्रत्यक्ष होगा और परमात्मा का भी साक्षात्कार होगा।

परमात्मा से मिलने का मार्ग दर्शन कर आर्यसमाज ने मनुष्यों द्वारा चलाए सभी मतों की आधारशिला समाप्त कर दी। अज्ञान और पाखण्ड की भावना के मूल को ही समाप्त कर दिया। सत्य "आत्मा" के विकास और आनन्द की अनुपम चाह में भटकते जीव को मनुष्य योनि प्राप्त करने का महत्त्व बताकर आर्यसमाज ने मानव मात्र की ज्ञान पिपासा पूर्ण की।

३. वेद ज्ञान का प्रचार

संसार वेदों को भूल चुका था। प्रभु की इस अमरवाणी का नाम ही शेष था। कोई कुछ कहता था और कोई कुछ समझता था। 'वेद' के सम्बन्ध में अनेक भ्रांत धारणाएँ व्याप्त थीं। मनुष्यकृत ग्रन्थों का चारों ओर बोल-बाला था।

शंकराचार्य के पश्चात् वेद के उद्धार और प्रचार का पुण्य कार्य महर्षि दयानन्द ने कर हमें अपने धर्मग्रन्थ से परिचित कराया। आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य ही वस्तुतः 'वेद' की भावनाओं का प्रचार था।

आर्यसमाज की मान्यता है कि—"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना प्रत्येक मनुष्य का परमधर्म है।"

—आर्यसमाज ने पिछले १०० वर्षों में 'वेद' के प्रचार द्वारा भू मण्डल में भारत के प्राचीन गौरव और ज्ञान का प्रचार किया।

—आर्यसमाज के प्रयत्नों का ही यह परिणाम है कि आज संसार के सभी विद्वान् 'वेद' को संसार के पुस्तकालयों का प्राचीन ग्रन्थ स्वीकार करते हैं।

—आर्यसमाज ने 'वेद' के आधार पर यह सिद्ध कर दिया कि मनुष्य मात्र जन्म से समान हैं। सभी को प्रभु की कल्याणी वाणी 'वेद' वीणा की ऋचाओं का संगीत सुनने का समान अधिकार है।

आर्यसमाज ने 'वेद' को ज्ञान-विज्ञान का अपूर्व भण्डार सिद्ध कर संसार में यह घोषित किया था कि भारतवर्ष आज से करोड़ों वर्ष पूर्व भी विद्या और विज्ञान में संसार का प्रमुख था। जो भी ज्ञान आज धरती पर विद्यमान है, उस सबका स्रोत 'वेद' ही है। 'वेद' ईश्वर का ज्ञान है। सृष्टि के आरम्भ में स्वयं प्रभु ने यह ज्ञान अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा ऋषियों के हृदय में प्रकट किया था।

आर्यसमाज का आधार 'वेद' है। आर्यसमाज का लक्ष्य वेद का प्रचार है। आर्यसमाज वेद को स्वतः प्रमाण मानता है। और उसका यह प्रबल प्रयत्न रहा है कि सारी धरती पर वेद की पावन पताका लहराए।

पश्चिमी विद्वानों ने वेदों के सम्बन्ध में भ्रामक विचार फैलाकर भारतीयों में हीन भावना उत्पन्न करने का षड्यन्त्र रचा था, किन्तु आर्यसमाज ने सफलता के साथ जहाँ उनके भ्रामक प्रचार का खण्डन किया, वहाँ महर्षि दयानन्द के व उनकी शैली पर किए गए वैदिक विद्वानों के भाष्य द्वारा संसार पर यह प्रगट कर दिया कि वास्तव में **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।"**

वेद-ज्ञान की पावन गंगा, बहा रहा है आर्यसमाज।
घर-घर से अज्ञान, अंधेरा, हटा रहा है आर्यसमाज॥
मत वादों-पंथों के झगड़े, मिटा रहा है आर्यसमाज।
सौ वर्षों से मनुज मात्र को, उठा रहा है आर्यसमाज॥

४. आत्महीनता से छुटकारा

आर्यसमाज ने मृतप्राय आर्य हिन्दू जाति को नया जीवन और शक्ति प्रदान की। अपने अस्तित्व को भूलकर मुगलों-अंग्रेजों के शासन तन्त्र में पिस कर हीन भावना से ग्रस्त राष्ट्र अपनी गौरव परम्परा को भूल चुका था। विदेशियों के बर्बर अत्याचारों और षड्यन्त्रों ने हमारी आस्थाओं—मान्यताओं को हिला दिया था।

हताश निराश आर्य हिन्दू जाति को पुनः सिंह समान पराक्रम के गर्जन का साहस प्रदान करने का श्रेय आर्यसमाज को ही दिया जा सकता है।

आर्यसमाज ने १८७५ के पश्चात् सर्वप्रथम स्वराज्य का अधिकार घोषित कर विदेशी शासन को उखाड़ फेंकने का मन्त्र दिया।

आर्यसमाज ने भारत के साहित्य, दर्शन, आत्मज्ञान को संसार में सर्वोच्च घोषित करते हुए भारतीय जनमानस में स्वाभिमान जागृत किया।

वह आर्यसमाज ही था जिसने कहा कि जब भारत के लोग कला-कौशल ज्ञान विज्ञान में उन्नति के शिखर पर थे तब अंग्रज लोग जंगली, असभ्य जीवन बिताते थे।

आर्यसमाज के उपदेशकों, विद्वानों ने यवनों, ईसाइयों को स्थान-स्थान पर जाकर ललकारा और अपने धर्म की श्रेष्ठता को शास्त्रार्थों द्वारा सर्वत्र सिद्ध किया। इसके लिए जितने बलिदान आर्यसमाज ने दिए उनका मूल्यांकन इतिहास के पृष्ठों की अमर कहानी है।

—भारत संसार का गुरु रहा है। भारत ने संसार को सभ्यता, ज्ञान, गणित, विज्ञान दिया है। यह उद्घोष आर्यसमाज की वेदी से पिछले १०० वर्षों से निरन्तर गूंज रहा है।

—६०० वर्षों की पराधीनता से जर्जर भारतीयों को प्रबल शक्ति के रूप में संगठित करने का महान् कार्य आर्यसमाज की एक अपूर्व देन है।

"**वयं जयेम**" के मन्त्र द्वारा आर्यसमाज ने कहा कि हम सदा जीते हैं। हारना हमने कभी सीखा नहीं। "आर्य" हिन्दू कभी हारता नहीं। विजय-वरण उसका जन्मसिद्ध अधिकार है।

—एक बीमार को, जो जीवन से निराश हो चुका हो, स्वस्थ कर देना कितना पुण्य कार्य है। आर्यसमाज ने तो देश के करोड़ों व्यक्तियों को नयी प्रेरणा, आशा और जीवन प्रदान किया।

युग युग तक नव जीवनदाता, अमर रहेगा आर्यसमाज।
मन्त्रमुग्ध-सा भव्य राष्ट्र का, संबल दाता आर्यसमाज।।
दीन हीन को सिंह बनाया, सारा ही नैराश्य भगाया।
विश्व विजय की भरी भावना, जय जय जय हे आर्यसमाज।।

५. यवनों-ईसाइयों का प्रतिरोध

आर्यसमाज की स्थापना से पहले मुसलमान और ईसाई महान् हिन्दू जाति को समाप्त करने में लगे हुए थे। हिन्दू अपना पवित्र धर्म छोड़कर इस्लाम और ईसाइयत को स्वीकार करते जा रहे थे। सामाजिक कुरीतियाँ, अज्ञान और अंधविश्वासों ने ऐसा आँधी चलायी थी कि सब कुछ उखड़ता जा रहा था।

संकट और विनाश की इस झंझा में आर्यसमाज हिमालय के समान सजग प्रहरी सा खड़ा हुआ और यवनों-ईसाइयों को ललकारा, फटकारा। जो तूफान अरब और वैटिकन से उठा था वह स्वयं पनाह मांगने लगा।

सत्यार्थप्रकाश का तेरहवाँ और चौदहवाँ समुल्लास वास्तव में ईसाइयत और इस्लाम के इरादों पर वज्र बनकर गिरा। वे पादरी और मौलवी जो हिन्दुओं का अस्तित्व मिटाने की सोच रहे थे, खुद अपनी खैर मनाने लगे।

आर्यसमाज ने शुद्धि का डंका बजाकर जब ईसाइयों और मुसलमानों को हिन्दू बनाने का अभियान चलाया तो उनके खेमों में हड़कम्प मच गया। धर्मवीर पं० लेखराम और अमर शहीद श्रद्धानन्द संन्यासी ने अपने प्राण देकर हिन्दू मात्र के लिए शुद्धि की वह अभेद्य प्राचीर खड़ी की, जिसे लांघने का साहस पादरी और मौलवी न कर सके। ये दोनों विभूतियाँ आर्यसमाज की अमर देन थीं।

काश्मीर से कन्याकुमारी तक, कच्छ से असम तक आर्यसमाज ने हिन्दू जाति को जागृत कर उसे यवनों-ईसाइयों के षड्यन्त्र से परिचित कराया। शुद्धि का मन्त्र उद्घोषित करके सहस्रों मुसलमानों-ईसाइयों को अपने में मिलाया। जो विधर्मी हो चुके थे उन्हें फिर से गले लगाया।

महात्मा गान्धी का पुत्र हीरालाल गान्धी जब मुसलमान बन गया तब वह आर्यसमाज ही था जिसने हीरालाल को हिन्दू बनाकर माँ कस्तूरबा की गोद में लाकर बिठाया था।

पिछले १०० वर्ष का इतिहास साक्षी है कि आर्यसमाज ने एक सजग प्रहरी की भाँति हिन्दू मात्र की रक्षा की। उसने सभी को नया मन्त्र दिया, शक्ति दी और दी भावना अधर्मियों से लड़ने की।

अज्ञानी, पाखण्डी, पापी, कांपे लख कर आर्यसमाज,
यवन,ईसाई, पोप, पादरी दूर हुए जब आर्यसमाज
आगे बढ़कर हुंकारा था, कांप उठे थे सारे पाप,
दौड़े मुल्ला, करके हल्ला, आया देखो आर्यसमाज !

६. स्वतन्त्रता का शंखनाद

१८५७ के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम को अंग्रेजों ने क्रूरता और निर्दयता से कुचल दिया था। सारे देश पर भय का साम्राज्य छाया था, स्वतन्त्रता की बात करना मौत को निमन्त्रण देना था।

ऐसे कठिन काल में आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में संवत् १९३९ में सबसे पहले गम्भीर गर्जना करते हुए लिखा था—

—कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता पिता के समान कृपा, न्याय, और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।

आर्यसमाज ने ही अपने प्रवर्तक के भावों के अनुसार स्थान - स्थान पर स्वराज्य का मन्त्र फूंका। आर्यसमाज ने ही सर्वत्र स्वदेशी का आन्दोलन चलाया। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने वालों में ९० प्रतिशत व्यक्ति आर्यसमाज के ही सदस्य थे। भारत माँ के बन्धन काटने के लिए अपने सिर भेंट देने वाले अमर शहीदों में ८५ प्रतिशत व्यक्ति आर्यसमाज के ही वीर थे।

महान् क्रांतिकारी श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा, लाला लाजपत राय, शहीद भगतसिंह, वीर श्रेष्ठ रामप्रसाद बिस्मिल, गयाप्रसाद शुक्ल आदि आर्यसमाज के ही सैनिक थे। भाई परमानन्द, ला० हरदयाल, वीर सावरकर और शहीद श्रद्धानन्द को आर्यसमाज ने ही राष्ट्र के प्रति अर्पित किया था।

आर्यसमाज ने शहीदों को पैदा किया। आर्यसमाज ने स्वतन्त्रता की भावना को जगाया। आर्यसमाज ने पश्चिम के प्रवाह से देश को बचाया। अग्रेज और अंग्रेजियत से लोहा लेने वाला और खुलकर संघर्ष का बिगुल बजाने वाला महान् संगठन आर्यसमाज ही तो था।

आर्यसमाज को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए अभी अमृतसर में पंजाब के मुख्यमन्त्री ने कहा था—कि **आर्यसमाज संस्था ने अकेले जितने देशभक्त उत्पन्न किए हैं उतने और कोई नहीं कर सकता।**

स्वराज्य, स्वदेशी, अछूतोद्धार, शराबबन्दी और गो-रक्षा यह राष्ट्र को आर्यसमाज की ही देन हैं। और सबसे बड़ी बात यह है कि आर्यसमाज ने अपने बलिदानों का कभी मूल्य नहीं माँगा। आर्यसमाज ने देश को उठाया, जगाया, और स्वतन्त्र कराया। उसने विदेशी शासन के विरुद्ध भी आवाज उठायी और विदेशी सभ्यता के विरुद्ध भी—सच तो यह है कि,

भारत मां की स्वतन्त्रता का पावन प्रहरी आर्यसमाज।
अंग्रेजों के दमन चक्र से जूझ रहा था आर्यसमाज॥
बलिदानों की परम्परा में सबसे आगे आर्यसमाज।
आज सभी की आशाओं का केन्द्र बिन्दु है आर्यसमाज॥

७. समानता का उद्घोष

पिछले १०० वर्षों से आर्यसमाज ने मनुष्य के मध्य खड़ी भेद-भावों की दीवारें गिराने का जो प्रयास किया है वह मानवता के इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों की अमर कहानी है !

मत-मजहब और पाखण्डों ने मनुष्य जाति को टुकड़ों में बांट दिया था। नीच ऊँच की विचारधारा ने देश को परतन्त्रता के पाश में बाँध दिया था। हजारों जातियां, हजारों उप-जातियां, उनमें भी प्रत्येक के अगणित भेद। भेद का प्रभाव इतना अधिक बढ़ चुका था कि एकता की बात कल्पना में भी असंभव प्रतीत होती थी।

आर्यसमाज ने अपनी प्रबल शक्ति से जन्मगत जातिवाद पर जबरदस्त प्रहार किया। नीच-ऊँच के भेद को मिटाने के लिए जोरदार आंदोलन चलाए, प्रचार किया। आर्यसमाज ने 'वेद' के आधार पर घोषणा की कि जन्म से सभी मनुष्य समान हैं। मनुष्य जाति में किसी भी प्रकार का कोई भेद भाव खड़ा करना धर्म विरुद्ध है।

आर्यसमाज ने बताया कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि वर्ण हैं और ये कर्मानुसार निश्चित होते हैं। ब्राह्मण का पुत्र शूद्र और शूद्र का पुत्र ब्राह्मण भी बन सकता है। ईश्वर ने सबको समान बनाया है। यह छोटे-बड़े, नीच-ऊँच का भेद पाखण्डियों ने बनाया है। यह सब धर्मविरुद्ध है।

आर्यसमाज की इस घोषणा ने जातिवाद की दीवारों को ध्वस्त कर दिया। अन्तर्जातीय विवाह होने लगे, छूत-छात का भाव मिटने लगा और विशाल हिन्दू जाति जो टुकड़ों में बंटी हुई थी एकता के सूत्र में बंधकर एक विशाल शक्ति के रूप में खड़ी हो गयी।

वर्तमान के प्रवाह को नया मोड़ देने का श्रेय आर्यसमाज को ही दिया जा सकता है। उसी ने जातिवाद, प्रांतीयता, छूतछात और समस्त कुरीतियों को मिटाने के लिए पिछले १०० वर्षों में निरन्तर संघर्ष किया है।

आर्यसमाज ही एक ऐसा संगठन है जो मानव जाति में जन्म से किसी भी स्तर पर, किसी भी भेद भाव को स्वीकार नहीं करता। वह सभी मनुष्यों को एक ईश्वर का पुत्र होने के नाते धरती पर भाई-भाई की तरह मिलकर रहने की प्रेरणा करता है।

आर्यसमाज की भावना है—

हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हों।
हो सुखी संसार सारा, भावनाएं नेक हों।
हों सभी के मन तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़े सुख सम्पदा।

८. नारी जाति का उत्कर्ष

आर्यसमाज से पहले यह मान्यता थी कि—

ढोल, गंवार शूद्र, पशु, नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।

किन्तु आर्यसमाज ने अपनी स्थापना के साथ ही यह उद्घोष किया कि—

यत्र नार्यस्तु पूयज्न्ते रमन्ते तत्र देवताः। जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है वहाँ देवता वास करते हैं। पर्दा, बालविवाह और बहुविवाह आदि कुरीतियों के कारण नारी की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। उसे पैर की जूती के समान समझ कर व्यवहार किया जाता था। किन्तु आर्यसमाज की स्थापना ने स्त्रियों का भाग्य ही बदल दिया। आर्यसमाज ने पर्दा प्रथा को समाप्त करने के लिए निरन्तर आन्दोलन किया। बालविवाह को जाति की दुर्बलता, सर्वनाश और व्यभिचारादि दुर्गुणों का कारण बताया। बहु विवाह को पशु धर्म बताकर उसकी समाप्ति के लिए प्रभावशाली पग उठाए।

नारी जाति की उन्नति के लिए स्थान-स्थान पर कन्या विद्यालय स्थापित किए। लगभग प्रत्येक आर्यसमाज में कन्या विद्यालय आज भी चलते हुए मिलेंगे। वर्तमान में कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि आज से १०० वर्ष पूर्व कन्याओं को पढ़ाना कितना कठिन था? कितने विरोध का सामना आर्य-समाज के कार्यकर्ताओं को उस समय करना पड़ा।

वह आर्यसमाज ही था जिसने नारी जाति को पढ़ने का, वेदाध्ययन का, गायत्री पाठ का अधिकार दिया। बहुत से अज्ञानी तो आज भी नारी को गायत्री पाठ का अधिकार देने को तैयार नहीं।

आर्यसमाज ने नारी को समानता का ही अधिकार नहीं दिया अपितु उसे मातृ शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया। 'भोग्या' के स्थान पर उसे 'पूज्या' का पद प्रदान किया।

आर्यसमाज द्वारा जन जागरण ने राष्ट्र को नयी दिशा दी। पिछड़ों को आगे बढ़ाया और नारी को उसके अधिकारों और दायित्वों से परिचित कराया।

आर्यसमाज ने नारी जागरण का जो आन्दोलन १०० वर्ष पूर्व आरम्भ किया था उसी का परिणाम है कि भारत की प्रधानमन्त्री भी आज एक महिला हैं।

कुएं और गहरी खाई से निकालकर समाज के उच्चासन पर नारी को प्रतिष्ठित करने का श्रेय आर्यसमाज को ही दिया जा सकता है। ज्ञान, कर्म और साधना में समान और दायित्वों को अधिक वहन करने के कारण नारी वन्दनीया है। वह माँ है। वह निर्मात्री है।

नारी का सम्मान मानवता का सम्मान है।
नारी का उत्थान राष्ट्र का उत्थान है॥

६. धर्म का उज्ज्वल रूप

१०० वर्ष बीत गए, युग बदल गया, पर युग-युगों तक धर्म के सच्चे उज्ज्वल, पावन रूप को प्रकट करने के लिए आर्यसमाज अमर रहेगा।

उस समय पूजा-पाठ को "धर्म" समझा जाता था।
छूत छात को "धर्म" बताया जाता था।
चौके चूल्हे में "धर्म" छिपा रहता था।
पाखंडों, ढोंगों ने "धर्म की संज्ञा पायी थी।

प्रतीत होता था कि धर्म एक जहर है, जो समाज को डस रहा है। नष्ट-भ्रष्टवपतित कर रहा है। किन्तु आर्यसमाज ने अज्ञान का आवरण हटा कर धर्म का सच्चा स्वरूप प्रकट कर संसार को बताया कि धर्म 'जहर' नहीं, अमृत है। ईसाइयत को धर्म समझने से पश्चिम के बुद्धिजीवी 'धर्म' से घृणा करने लगे। मार्क्स ने धर्म को अफीम की संज्ञा दी। इस्लाम को देखकर लोगों ने धर्म को संहारक समझा और उससे बचने के उपाय सोचने लगे। पाखंडों, ढकोसलों और मतवादियों के षड्यन्त्र को देखकर 'धर्म' से दूर रहने की मनोवृत्ति सर्वत्र फैलती गयी। किन्तु आर्यसमाज ने सर्वप्राचीन शास्त्रकार मनुमहाराज के शब्दों में बताया कि—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रह :।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ॥

धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध ये दस धर्म के लक्षण हैं। जो इनका पालन करता है, वह धार्मिक है।

धर्म पालन के लिए यम-नियमों को सहायक बताया—**पांच यम** इस प्रकार है—**तत्राहिंसासत्याऽस्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ॥**

अहिंसा (वैर त्याग) (सत्य) सत्य मानना, सत्य बोलना और सत्य ही करना (अस्तेय) अर्थात् मन वचन कर्म से चोरी का त्याग (ब्रह्मचर्य) उपस्थेन्द्रिय का संयम (अपरिग्रह) स्वाभिमान रहित अत्यन्त लोलुपता। और—

पांच नियम—शौचसंतोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥

(शौच) अर्थात् स्नानादि से पवित्रता (संतोष) सम्यक् प्रसन्न होकर निरुद्यम रहना संतोष नहीं किन्तु पुरुषार्थ जितना हो सके, उतना करना, हानि-लाभ में शोक न करना, (तप) अर्थात् कष्ट सेवन से भी धर्मयुक्त कर्मों का अनुष्ठान (स्वाध्याल) पढ़ना-पढ़ाना (ईश्वर प्रणिधान) ईश्वर में भक्ति विशेष से आत्मा को अर्पित करना ये पांच नियम कहाते हैं। "धर्म" के इस उज्ज्वल वैज्ञानिक युक्तिसंगत, सार्वभौम रूप को संसार के बुद्धिजीवी वर्ग के समक्ष प्रस्तुत कर आर्यसमाज ने 'धर्म' की रक्षा की।

युग-युगों से धर्म के नाम पर चल रहे पाखडों पर वज्र प्रहार कर आर्य-समाज ने अधर्म को समाप्त किया। वस्तुतः आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य ही धर्म की रक्षा और अधर्म की समाप्ति था।

१०. आशाओं का केन्द्र बिन्दु

१२ अप्रैल १९७५ (चैत्र शुदि प्रतिपदा) को आर्यसमाज अपनी स्थापना के १०० वर्ष पूर्ण कर रहा है। किसी भी युगान्तरकारी संगठन के १०० वर्षों का इतिहास ८-१० पृष्ठों में उपस्थित करना कठिन ही नहीं असंभव है। हमने पिछले ९ पृष्ठों में आर्यसमाज के उन कार्यों की दिशाओं का संकेत मात्र किया है, जिन्होंने विश्व की गति को परिवर्तन की प्रेरणा दी है।

वस्तुतः आर्यसमाज सत्य का प्रसारक और असत्य का संहारक संगठन है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आर्यसमाज का पक्ष सत्य का पक्ष रहा है। उसकी क्रांति भी निर्मात्री रही है।

आर्यसमाज ने अपने सभी संभव साधनों से जो पथ प्रशस्त किया है वह युग-युगों तक मानव जाति का मार्ग दर्शन करता रहेगा। आधुनिक युग में विज्ञान को धर्म का विरोध समझा गया है किन्तु आर्यसमाज के मंतव्यानुसार धर्म और विज्ञान में कहीं भेद नहीं, विरोध नहीं। विज्ञान सत्य का अन्वेषक है और धर्म सत्य का आधार; दोनों की दिशा एक है।

कुरीतियां, पाखंड, अज्ञान, और अन्धविश्वासों को मिटाता हुआ आर्य समाज विश्वविजय करता बढ़ता रहा है और बढ़ता रहेगा। उसके दिव्य स्वप्नों में सैनिक बल से साम्राज्य स्थापना की भावना नहीं, विचारों की एकता द्वारा विश्व शांति की अमर साधना है।

आर्यसमाज संसार की अनेकता को मिटा कर एकता का संदेशवाहक है। मनुष्य मात्र में प्रेम का सम्बन्ध स्थापित कर उसने एक ऐसे विश्व की कल्पना की है जिस में दुःख, कष्ट, क्लेश का कहीं लेश भी शेष न रहे।

आर्यसमाज ने पिछले १०० वर्षों में ज्ञान का बीज बोकर जो वातावरण तैयार किया है उसके आधार पर हमें विश्वास है कि अगली शताब्दी में आर्य समाज के साधक वैदिक युग की कल्पनाओं को साकार रूप देकर धरती पर धर्म का साम्राज्य स्थापित करने में सफल होंगे।

आप भी धर्म की रक्षा, सत्य के प्रसार और अज्ञान की समाप्ति के लिए आइए, आर्यसमाज के साथ मिलकर मनुष्य मात्र की उन्नति के प्रयत्नों में योग दीजिए।

पिछले १०० वर्षों में आर्यसमाज ने सत्य के लिए संघर्ष किया और आगामी १०० वर्षों में वह सत्य के प्रसार-प्रचार में सफल होगा।

सम्पूर्ण मानवता की आशाओं का केन्द्र बिन्दु आर्यसमाज संसार के सभी व्यक्तियों का कल्याण चाहता है।

आर्य समाज के मंतव्यों को भली भाँति समझने के लिए "सत्यार्थप्रकाश" ग्रन्थ पढ़िए।

११. आर्यसमाज के विशेष मंतव्य

१. आर्यसमाज तीन पदार्थों को अनादि मानता है—ईश्वर, जीव और प्रकृति।
   (क) ईश्वर एक और सच्चिदानन्दादिलक्षणयुक्त है।
   (ख) जीव अनेक एवं इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख, ज्ञानादि गुणयुक्त अल्पज्ञ तथा नित्य हैं।

   (ग) जीव और ईश्वर परस्पर भिन्न और व्याप्य-व्यापक, उपास्य-उपासक एवं पिता-पुत्र आदि सम्बन्ध युक्त हैं।
   (घ) प्रकृति जड़ है, जो नाना द्रव्यों के रूप में दीख पड़ती है।

२. **पाप-पुण्य**—विद्यादि शुभ गुणों का दान और सत्य भाषणादि, सत्य व्यवहार करना पुण्य और इससे विपरीत पाप कहलाता है।

३. **स्वर्ग नरक**—जीव को उसके किए पुण्य के फलस्वरूप विशेष सुख और सुख की सामग्री प्राप्त होना ही स्वर्ग है। इसी प्रकार पाप कर्म के फलस्वरूप विशेष दुःख और दुःख की सामग्री प्राप्त होने का नाम नरक है। स्वर्ग-नरक किन्हीं लोक या देश विशेष का नाम नहीं है।

४. **पुनर्जन्म**—जीव अपने कर्मानुसार नाना योनियों में बार-बार जन्म लेते हैं, शरीर धारण करना जन्म और शरीर से वियोग होने का नाम मरण कहाता है।

५. **मुक्ति**—सब बुरे काम और जन्म-मरणादि दुःख सागर से छूटकर सुख रूप परमेश्वर को प्राप्त हो सुख ही में रहना मुक्ति कहलाता है। ज्ञान-कर्म का फल होने से यह भी सान्त है।

६. **स्तुति**—ईश्वर के गुणों का कीर्तन, श्रवण और ज्ञान—इससे ईश्वर में प्रीति और उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण, कर्म स्वभाव का सुधारना आदि फल होते हैं।

७. **प्रार्थना**—अभिमान का नाश, आत्मा में आर्द्रता, गुण ग्रहण के लिए प्रीति और पुरुषार्थ का होना आदि इसके फल हैं।

८. **उपासना**—परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना उपासना कहलाती है।

९. **पूजा**—ज्ञानादि गुणयुक्त चेतन का यथायोग्य सत्कार करना ही पूजा है। इसलिए जड़ मूर्ति आदि पदार्थों की पूजा हो ही नहीं सकती।

१०. **वर्णाश्रम**—गुण कर्मों की योग्यता से होते हैं।

११. **'देव'**—विद्वान् और 'असुर' अविद्वान् पापी होते हैं।

१२. **'तीर्थ'**—जिससे दुःख सागर से पार उतरें, जल स्थल आदि नहीं।

१३. **'पुरुषार्थ'**—प्रारब्ध से बड़ा होता है।

१२. महर्षि दयानन्द [महापुरुषों की दृष्टि में]

—महर्षि दयानन्द हिन्दुस्तान के आधुनिक ऋषियों में, सुधारकों में, और श्रेष्ठ पुरुषों में एक थे। इनका चरित्र मेरे लिये ईर्ष्या का विषय है। उनके जीवन का प्रभाव हिन्दुस्तान पर बहुत अधिक पड़ा है।

—मोहनदास कर्मचन्द गान्धी

—मेरा सादर प्रणाम उस गुरु दयानन्द को है, जिसका उद्देश्य भारतवर्ष को अविद्या, आलस्य और प्राचीन, ऐतिहासिक तत्त्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था। उसे मेरा बारम्बार प्रणाम है। आधुनिक भारत के मार्गदर्शक महर्षि दयानन्द जी सरस्वती को मैं सादर श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ। —रवीन्द्रनाथ टैगोर

इस बात का श्रेय दयानन्द को ही प्राप्त होगा कि उन्होंने सर्वप्रथम वेदों की व्याख्या के लिए निर्दोष मार्ग का अवलम्बन किया था। ऋषि दयानन्द ने उन द्वारों की कुंजी प्राप्त की है जो युगों से बन्द थे और उससे पटे हुए झरनों का मुख खोल दिया। —अरविन्द घोष

—स्वामी दयानन्द एक विद्वान् थे। उनके धर्म नियमों की नींव ईश्वर-कृत वेदों पर थी उन्हें वेद कण्ठस्थ थे। उनके मन और मस्तिष्क में वेदों ने घर किया हुआ था। वर्तमान समय में संस्कृत का एक ही बड़ा विद्वान्, साहित्य का पुतला, वेदों के महत्त्व को समझने वाला, अत्यन्त प्रबल नैयायिक और विचारक यदि भारतवर्ष में हुआ है तो वह महर्षि दयानन्द सरस्वती ही था। —मैक्समूलर

—हमें वेदों के अध्ययन को प्रबल प्रोत्साहन देने और यह सिद्ध करने के लिए कि मूर्तिपूजा वेद-सम्मत नहीं है, स्वामी दयानन्द के उपकार को अवश्य स्वीकार करना चाहिए। — विण्टरनिट्ज

—स्वामी दयानन्द निःसन्देह एक ऋषि थे। उनका प्रादुर्भाव लोगों को कारागार से मुक्त करने और जाति बन्धन तोड़ने के लिए हुए हुआ था।

—[illegible] रिचर्ड

—वह इतने अच्छे और विद्वान् आदमी थे कि प्रत्येक धर्म के अनुयायियों के लिए सम्मान के पात्र थे। —सैयद अहमद खां

जो न हटा मुख फेर, बढ़ा [illegible]
जिसका साहस हेर, विघ्न, भय, संकट भागे।
सबल सत्य की हार, अनृत की जीत न होगी,
ऐसे प्रबल विचार, सहित विचरा जो योगी।
उस दयानन्द ऋषि-राज का प्रकृत पाठ जनता पढ़े।
प्रभु 'शंकर' आर्यसमाज का, वैदिक बल गौरव बढ़े॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

आर्यसमाज के १० नियम

१—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्य्यों का परम धर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है—अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती

चैत्र शुदि प्रतिपदा संवत् २०३२, शनिवार १२ अप्रैल १९७५ को सर्वत्र आर्यसमाज स्थापना शताब्दी मनाएं। उस दिन दीपमाला करें। सत्यार्थप्रकाश, ऋषि जीवन व साहित्य बांटें। महर्षि के चित्र, पोस्टर सर्वत्र लगाएं। प्रत्येक सहयोग के लिए सम्पर्क कीजिए—

ओमानन्द सरस्वती—प्रधान भारतेन्द्रनाथ—मन्त्री

सार्वभौम आर्यसमाज शताब्दी परिषद्

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-५

मुद्रक—सनी प्रिन्टर्स, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६